

Prepared by

Dr. Md.Haider Ali, Assistant Professor

Dept.of History, R.B.G. R. College

Maharajganj, JPU, Chapra

प्रश्न: मुग़ल बादशाह औरंगज़ेब की धार्मिक नीतियों का मूल्यांकन कीजिए।

उत्तर :

औरंगज़ेब सर्वोपरि एक उत्साही सुन्नी मुसलमान था। उसकी धार्मिक नीति सांसारिक लाभ के किसी विचार से प्रभावित नहीं थी। उदार दारा के विरुद्ध सुन्नी कट्टरता के समर्थक के रूप में राजसिंहासन प्राप्त करने वाले की हैसियत से उसने कुरान के कानून को कठोरता से लागू करने का प्रयत्न किया। इस कानून के अनुसार, प्रत्येक धार्मिक मुस्लिम को अल्लाह की राह में मिहनत करनी चाहिए, या दूसरे शब्दों में, तब तक गैर-मुसलमान देशों (दारुल-हर्ब) के विरुद्ध धर्म-युद्ध (जिहाद) करना चाहिए, जब तक कि वे इस्लाम के राज्य उत्कट कट्टरपंथी बन गया, जिससे उसने जीवन की म्लान गम्भीरता सूक्ष्माचार-प्रधान कट्टरता वाले अपने विचारों को लागू करने के लिए कदम उठाये। उसके अपने जन्मदिन एवं राज्याभिषेक-दिवस के प्रचलित को सरल बना दिया। अपने शासन-काल के ग्यारहवें वर्ष से उसने झरोखा-दर्शन के प्रचलन को बन्द कर दिया। इस प्रथानुसार उसके पूर्वगामी प्रतिदिन सबेरे राज प्रसाद की दीवार के बरामदे पर लोगों का, जो उस समय सामने मैदान में एकत्रित रहते थे, अभिवादन स्वीकार करने की उपस्थित होते थे। उसी वर्ष उसने दरबार में संगीत का निषेध कर दिया तथा पुराने संगीतज्ञों और गायकों को बर्खास्त कर दिया। परन्तु दरबार में प्रतिबन्ध लगाये जाने पर भी **संगीत मानवीय आत्मा से निर्वासित नहीं किया जा सका**। सरदार गुप्त रूप से इसका अभ्यास करते रहे तथा शाही निषेध का कुछ प्रभाव केवल विख्यात नगरों में ही था। बारहवें वर्ष में बादशाह के शरीर को दो जन्मदिवसों पर सोने, चाँदी एवं अन्य वस्तुओं में तौलने का उत्सव रोक दिया गया तथा शाही मुहूर्तकों एवं ज्योतिषियों को हटा दिया गया। पर ज्योतिष-विद्या में मुसलमानों का विश्वास उनके दिमागों में इतनी गहराई के साथ जमा हुआ था कि किसी शाही आज्ञा से उसे उखाड़ना सम्भव न था। यह अठारहवीं सदी में भी बहुत काल तक सक्रिय रहा। अन्य धर्मावलम्बियों द्वारा सिक्कों पर कलमा के अपवित्र होने से बचाने के लिए उसने इसका व्यवहार निषिद्ध कर दिया। उसने नैरोज को भी उठा दिया, जिसे भारत के मुग़ल बादशाहों ने फारस से अपनाया था। उसने लोगों के जीवन को कुरान के कानून के पूर्णतया अनुरूप बनाने के लिए महतसिबों (सार्वजनिक सदाचार निरीक्षकों) को नियुक्त किया।

औरंगजेब जो कुछ दूसरों पर लागू करना चाहता था, उसका स्वयं अभ्यास करता था। उसके व्यक्तिगत जीवन का नैतिक स्तर ऊँचा था तथा वह अपने युग के प्रचलित पापों से दृढ़तापूर्वक अलग रहता था। इस प्रकार उसके समकालीन उसे **शाही दरवेश** समझते थे तथा मुसलमान उसे **जिन्दा पीर** के रूप में पूजते थे। सामान्य नैतिकता की उन्नति के लिए उसने अनेक नियम बनाये। उसने एक कानून द्वारा मदिरा एवं भाँग के उत्पादन की बिक्री तथा सार्वजनिक व्यवहार का निषेध कर दिया। मनुची हम लोगों का बतलाता है कि **नर्तकियों एवं वेश्याओं को विवाह कर लेने अथवा राज्य छोड़ देने** की आज्ञा दे दी गयी। बादशाह ने कड़ी आज्ञा दी कि अश्लील गीत नहीं गाये जाएँ उसने विशेष धार्मिक त्यौहारों के समय लकड़ी के बोझों का जलाना तथा जुलूसों का चलना रोक दिया। औरंगजेब के राज्यकाल की सरकारी तारीखों में लिखा हुआ है कि उसने सती-प्रथा को उठा दिया (दिसम्बर, 1663 ई.)। परन्तु भारत में आने वाले समकालीन यूरोपीय यात्रियों के प्रमाण से मालूम होता है कि शाही निषेधाज्ञा को शायद ही माना जाता था।

फिर भी बादशाह केवल इन्हीं नियमों से सन्तुष्ट होकर नहीं बैठा रहा। उसने अन्य फरमान तथा आज्ञापत्र जारी किये, जिनसे लोगों के महत्त्वपूर्ण वर्गों के सम्बन्ध में एक नयी नीति का उद्घाटन हुआ। सन् 1679 ई. में काफिरों (गैर-मुसलमानों) पर पुनः जजिया कर लगा दिया गया।

इन नए नियमों और अग्यापत्रों का उन लोगों पर अवश्य ही गहरा प्रभाव पड़ा होगा, जिनके लिए ये जारी किए गए। इन्होंने वैसी कठिनाईयों को बहुत बाधा दिया होगा, जिनका शाही सरकार को सामना करना था। बादशाह औरंगजेब को अपने धर्म का सच्चा एवं ईमानदार व्याख्याता होने का जो श्रेय था, उसे कोई अस्वीकार नहीं कर सकता। पर यह भी सच है कि अपने उत्साह एवं जोश के कारण वह यह भूल गया कि भाग्य ने जिस देश पर उसके शासन करने का विधान रचा था, उसकी आबादी समान जाति की नहीं थी, बल्कि विभिन्न तत्वों की थी, जो अपनी धार्मिक परम्पराओं एवं आदर्शों में थी और इसे चतुराई एवं सहानुभूति के साथ समझने की आवश्यकता थी। औरंगजेब ने राज्य के हितों का, अपने धर्म के हितों से समीकरण कर तथा इससे मतभेद रखने वालों को अप्रसन्न कर अवश्य ही भूल की। इस नीति से लोगों के कुछ वर्गों में असन्तोष की भावनाएँ उत्पन्न हो गयीं, जिन्होंने उसके राज्यकाल के शेष भाग में उसकी ताकत को दूसरी ओर मोड़ दिया। इस प्रकार यह मुगल-साम्राज्य की अवनति एवं पतन का अत्यन्त प्रबल कारण सिद्ध हुआ।

नीति की प्रतिक्रिया- बादशाह के विरुद्ध प्रतिक्रिया का सर्वप्रथम भयानक विस्फोट मथुरा जिले के जाटों के बीच हुआ, जहाँ शाही फौजदार अब्दुल्खी ने उन पर बहुत अत्याचार कर रखा था। 1669 ई. में शक्तिशाली जाट किसानों ने तिलपत के जमींदार गोकला के नेतृत्व में विद्रोह कर दिया। उन्होंने फौजदार को मार डाला और एक वर्ष तक सम्पूर्ण जिले को अव्यवस्था की दशा में रखा। अंत में मथुरा के नये

फौजदार हसन अली खाँ के अधीन एक मजबूत शाही सेना ने उनका दमन कर दिया। गोकला मार डाला गया तथा उसके परिवार के सदस्यों को मुसलमान बना दिया गया। परन्तु इससे जाट स्थायी रूप से नहीं कुचले गये। उन्होंने 1685 ई. में पुनः एक बार राजाराम के नेतृत्व में विद्रोह कर दिया और 1688 ई. में **सिकन्दरा में अकबर की कब्र** को लूट लिया। राजाराम को परास्त कर मार डाला गया तथा जाटों का प्रधान गढ़ 1691 ई. में अधीन कर लिया गया। परन्तु उन्हें शीघ्र **चुरामन** नामक एक अधिक उग्र नेता मिल गया। चुरामन ने असंगठित जाटों को एक प्रबल सैनिक शक्ति में परिवर्तित कर दिया तथा औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् मुगलों के विरुद्ध एक सशस्त्र प्रतिरोध का संगठन किया।

औरंगजेब की नीति के विरुद्ध दूसरे सशस्त्र विरोध का नेतृत्व बुन्देला राजा छत्रसाल ने किया। छत्रसाल के पिता चम्पत राय ने औरंगजेब के राज्यकाल के प्रारम्भिक भाग में उसके विरुद्ध विद्रोह किया था परन्तु बादशाह की ओर से अधिक दबाव पड़ने पर कैद से बचने के लिए उसने आत्म-हत्या कर ली। छत्रसाल ने दक्कन में बादशाह की सेवा की थी, जहाँ शिवाजी के दृष्टान्त से प्रोत्साहित होकर उसने साहस तथा स्वतंत्रता का जीवन व्यतीत करने का स्वप्न देखा। बुन्देलखंड तथा मालवा की हिन्दू प्रजा के असन्तोष ने उसे 1671 ई. तक अपने धर्म तथा बुन्देल स्वतंत्रता के समर्थक के रूप में खड़े होने का अवसर दे दिया। उसने मुगलों पर कई विजयें प्राप्त कीं तथा पूर्वी मालवा में अपने लिए एक स्वतंत्र राज्य स्थापित करने में सफल हुआ। इसकी राजधानी पन्ना में थी। 1731 ई. में उसकी मृत्यु हुई।

एक और विद्रोह मार्च, 1672 ई. में सतनामियों के बीच हुआ। ये मूल रूप में हिन्दू भक्तों का एक अनुपद्रवी सम्प्रदाय था। इसका केंद्र नारनोल (पटियाला में) एवं मेवात (अलवर क्षेत्र) में था। सतनामियों के विद्रोह का तात्कालिक कारण था एक मुगल पैदल सैनिक द्वारा उनके एक सदस्य की हत्या। उन्होंने नारनोल पर अधिकार कर लिया। जब परिस्थिति गम्भीर सिद्ध हुई, तब मुगल बादशाह ने सैनिकों को अपने तबुओं के बाहर निकलने की आज्ञा दी। अप्रशिक्षित सतनामी किसान शीघ्र एक विशाल शाही फौज द्वारा परास्त हो गये। उनमें से बहुत कम बच पाये तथा देश का वह भाग उनसे साफ हो गया। औरंगजेब की नीति से सिक्खों में भी असंतोष फैला।

आसाम-युद्ध (1668 ई.) में वे मिर्जा राजा जयसिंह के पुत्र राजाराम सिंह से जा मिले। परन्तु वे शीघ्र आनन्दपुर में अपने मूल-निवास को लौट आये। अब शाही सरकार से उनकी शत्रुता ठन गयी। उन्होंने बादशाह के कुछ कामों का विरोध किया तथा कश्मीर के ब्राह्मणों को इनका प्रतिरोध करने को प्रोत्साहित किया। यह औरंगजेब की बर्दाश्त के बाहर था। उसने सिक्ख गुरु को बन्दी बनाकर दिल्ली मंगवाया। वहाँ

उसे मृत्यु तथा धर्म-परिवर्तन के बीच एक को चुनने का अवसर दिया गया। तेग बहादुर ने अपने धर्म को जीवन से अधिक पसन्द किया। पाँच दिनों के बाद उनकी फाँसी हो गयी (सन् 1675 ई.)। इस प्रकार उन्होंने अपना **सर दिया, सार न दिया**। गुरु की शहादत से सिक्खों की मुगल-साम्राज्य के विरुद्ध प्रतिशोध की भावना को प्रेरणा मिली तथा प्रकट रूप से युद्ध अनिवार्य हो गया। आगे की स्मृति में शीशगंज गुरूद्वारा (दिल्ली) का निर्माण किया गया।

तेग बहादुर के पुत्र एवं उत्तराधिकारी **गुरु गोविन्द** भारतीय इतिहास में एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण व्यक्तित्व थे। वे **एक यूनानी विधि-निर्माता की** संपूर्णता के साथ अपने अनुगामियों के संगठन के काम में कटिबद्ध हो गए। उन्होंने छुरे से चलाए हुए जल द्वारा दीक्षा (पहुल) की प्रणाली कायम की। इस नये प्रकार की दीक्षा को स्वीकार करने वाले **खालसा** कहलाये। उन्हें **सिंह** की उपाधि दी गयी। उन्हें **पंच ककार** को ग्रहण करना पड़ता था- केश, कघा, कृपाण, कच्छा और कड़ा। उन्हें लड़ाई में शत्रु को अपनी पीठे नहीं दिखलानी थी। उन्हें सदा निर्धनों एवं भाग्यहीनों की सहायता करनी थी। गुरु गोविन्द ने एक पूरक **ग्रन्थ** का संकलन किया। इसका नाम था **दसवें बादशाह का ग्रन्थ**। उन्होंने कुछ पार्श्ववर्ती पहाड़ी राजाओं तथा मुगल अधिकारियों के विरुद्ध विलक्षण साहस एवं दृढ़ता के साथ युद्ध किया। कहा जाता है कि उन्होंने बहादुर शाह प्रथम को राजसिंहासन के लिए हुए उसके संघर्ष में सहायता दी तथा आगे चलकर उसके साथ दक्कन के लिए रवाना हुए। एक धर्मोन्मत्त अफ़ग़ान ने 1708 ई. के अंत में गोदावरी के किनारे नान्द नामक स्थान पर उन्हें छुरा मार दिया, जिससे उनकी मृत्यु हो गयी।